'श्रमिक कल्याण के संबंध में श्रम–नियोक्ता संबंधों का विश्लेषण''

*पुष्पा तातेड़ (जैन)

21 वीं सदी परिवर्तन की सदी है, इस युग में औद्योगिक क्षैत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। इस परिवर्तन ने समाज के सभी वर्गो (विशेषतः श्रमिक वर्ग) के सामाजिक आर्थिक व सांस्कृतिक पहलुओ को गहरे रूप में प्रभावित किया है। इन्ही परिस्थितियों से उत्पन्न श्रमिक समस्याओं के कारण श्रम कल्याण को औद्योगिक–आर्थिक व्यवस्था के एक अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार किया है।

आदि काल में मनुष्य का जीवन निर्वाह अर्थव्यवस्था पर आधारित था। वह जंगल के फल–फूल खाकर या जंगली जानवरों का शिकार कर जीवन यापन करता था। इस समय वर्ग भेद नहीं था। समय के साथ मानव ने उत्पादन के नये साधन ढूंढ निकाले और विकास प्रक्रिया आगे बढ़ती रही। उत्पादन के नवीन साधन उत्पन्न होने पर मार्क्स के अनुसार सामाजिक संरचना बदल जाती है। सामन्तवादी युग जिसमें उत्पादन का साधन भूमि था, लेकिन आगे व्यापार केन्द्रीय विषय होने से एक नवीन युग का जन्म हुआ इसे पूंजीवाद की संज्ञा दी गई हैं। वास्तव में यह युग लघु व कुटीर उद्योगो के साथ ही शुरू हो गया, परन्तु पूर्ण रूप से इसे औद्योगिक क्रान्ति के बाद तीव्र व्यापारिक गतिविधियों से जोड़ा गया। बढ़ती मानवीय उपभोक्ता आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु विभिन्न अनुसंधान व तकनिकी परिवर्तन ने कारखाना पद्धति को जन्म दिया। इस पद्धति में नवीन आविष्कृत मशीनों द्वारा कम समय में अधिक व सस्ती वस्तुओं का उत्पादन होने लगा। परन्तु इस परिवर्तन ने सामाजिक बंधन ढीले कर अनेक नवीन समस्याओं को जन्म दिया। नवीन वर्गभेद, पूंजी के असमान वितरण, मानवीय श्रम दशा व सामाजिक तनाव ने श्रम संघर्ष, श्रम समस्या व अन्त में श्रम कल्याण की एक नवीन विचार धारा को जन्म दिया।

देखा जाये तो पूरी 18वीं शताब्दी में वैज्ञानिक क्रान्ति ने यूरोपीय लोगो के जीवन व दृष्टिकोण को पूरी तरह बदल दिया। औद्योगिकीकरण के परिणाम स्वरूप जहां एक ओर सामन्तवाद पतन की ओर अग्रसर हुआ, वही पूंजीवाद व वाणिज्यिक अर्थव्यवस्था का प्रारम्भ हुआ। औद्योगिक विकास, व्यापार वाणिज्य व समुद्र पारीय यात्रा के कारण शहरीकरण तीव्र हो गया व नगर महानगर में परिवर्तित होने लगे। यह सब आधुनिकता का प्रभाव था। 1990 के दशक के बाद आधुनिकता का परिवेश अधिक व्यापक हो गया, इससे आधुनिकता से उत्पन्न समस्याओं के समाधान हेतु नवीन विचारों का आविर्भाव हुआ, जिसे उत्तर आधुनिकता से परिभाषित किया गया। यह एक संस्कृति प्रधान विचारधारा हैं। अर्थात् एक प्रकार से लोक संस्कृति हैं। इसी संस्कृति का अंग अति उपभोक्तावाद है, जिसे विज्ञापन संस्कृति भी कहा गया हैं, जैमसन तथा हार्वे ने उत्तर आधुनिकता को अर्थ व्यवस्था से जोड़ा हैं।

भारत वर्ष में भी औद्योगिकीकरण के साथ उद्योगो व कारखानों की समस्याओं में वृद्धि हुई, समय के साथ विभिन्न नियम व उपनियमों का निर्माण किया गया परन्तु नियोजक व श्रमिको के मध्य बढ़ती समस्याओं, हानि व श्रमहितो की उपेक्षा के कारण उन उद्यमों को सरकार ने अपने स्वामित्व में ले लिया। वर्तमान आर्थिक उदारीकरण, वैश्वीकरण व प्रतिस्पर्द्धा के युग में बाजार में टिकने, श्रम समस्या के समाधान व अद्यतन रहने हेतु ओद्यौगिक मिलों, संस्थानों एवं फैक्ट्रीयों के ढ़ांचो में अनवरत परिवर्तन किए गये ।

औद्यागिक क्रान्ति से उत्तर आधुनिकता तक औद्योगिक संस्थानों, मिलो, फैक्ट्रीयों में कार्यरत श्रमिको के कल्याण कार्यक्रमों पर बहुत कुछ टीका टिप्पणी की गई हैं। इन्हें मशीन के अंग से वर्तमान में मानव ससांधन तक विभिन्न उपमाए दी गई हैं। आज के बदलते परिवेश में उच्च स्तरीय प्रौद्योगिकी से युक्त कार्यो की कुछ बदलती हुई तस्वीर हमारे सामने आ रही हैं। जैसे (1) मानव रहित कार्य (पावर प्लाट) (2) दिन में 24 घण्टे कार्य (फेक्ट्री, रेस्टोरेन्ट) (3) कार्य के लिए ठेके के स्थान पर कार्य का ठेका (4) नियोजित कामगार के स्थान पर स्वतन्त्र ठेकेदार (5) प्रतिमानों की अपेक्षा मूल्यों को अधिक महत्व दिया जाना। (6) नियन्त्रण की अपेक्षा प्रतिबद्धता को अधिक महत्व उपर्युक्त परिवेश में श्रम की बनावट में भी परिवर्तन हुआ हैं। श्रमिक संघ भी अब वर्ग संघर्ष की अपेक्षा वर्ग सहयोग की संस्कृति अपना रहे हैं। श्रमिक अब सामान्य अपेक्षाओं के बजाय कार्य जीवन में गुणात्मकता के समावेश की अपेक्षा करता हैं। औद्योगिक संबंध भी अब श्रम और प्रबन्ध के विवादों के सुलझाव तक ही सीमित नहीं रह गए हैं, वरन आज औद्योगिक संबंध सम्पूर्ण रोजगार संबंध बन गए हैं और मानव संसाधन प्रबन्ध की प्रविधियों के माध्यम से न केवल श्रमिक की संतुष्टि एवं विकास की अपेक्षा प्रबन्ध से की जा रही हैं, वरन श्रम से भी यह अपेक्षा हो रही हैं कि वह प्रबन्ध के लक्ष्यों की प्राप्ति में अधिकतम योगदान दे।

भारत के संविधान में भी सामान्य वर्ग के साथ–साथ श्रमिक वर्ग के कल्याण को महत्ता प्रदान की गई हैं। श्रमिकों के लिए न्याय संगत एवं मानवीय कार्य की दशाओं पर बल दिया गया हैं। 1959 में भारत सरकार द्वारा स्थापित अध्ययन समिति के अनुसार ''**सामाजिक सुरक्षा भी श्रम कल्याण का एक महत्वपूर्ण पहलू हैं।**''

कमेटी ऑन लेबर वेलफेयर (1969) के समक्ष अपना साक्ष्य देते हुए नियोक्ता प्रतिनिधियों ने स्पष्ट किया कि औद्योगिक प्रतिष्ठानों में मानव रूपी कच्चे माल के विकास पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहीए अर्थात नियोक्ता को उत्पादकता वृद्धि के साथ औद्योगिक शान्ति हेतु उत्पादन के अन्य साधनों की भांति श्रम कल्याण पर विशेष ध्यान देना आवश्यक हैं। इसके अन्तर्गत औद्योगिक प्रतिष्ठानों में कार्य करने के समय ही श्रमिकों के कल्याण की बात नहीं सोची जाती है, वरन् औद्योगिक प्रतिष्ठानों के बाहर उनके परिवारिक एवं सामुदायिक कल्याण की बात भी सोची जाती है। डा. एम.वी.मूर्ति के अनुसार श्रमिक में कार्यगत एवं समुदायगत प्रभावों का अन्तर्प्रवाह होता रहता है। कोई भी अधिकारी इस अन्तर्क्रिया के समाजशास्त्र पर ध्यान दिए बिना सफल नहीं हो सकता है। इस सम्बन्ध में आश्चर्यजनक बात यह है कि कारखाना अधिनियम 1948 के अन्तर्गत कारखाने के बाहर श्रमिक के कल्याण सम्बन्धी किसी सुविधा का प्रावधान ही नहीं किया गया हैं। हाँ, कर्तव्य सूची में यह प्रावधान किया गया है कि वे श्रमिकों के आवास, बच्चों की शिक्षा तथा सफाई आदि सुविधाओं की व्यवस्था हेतु प्रबंधकों को सलाह दें और साथ ही श्रमिकों के रहन–सहन के स्तर को ऊँचा उठाने में भी प्रबंधकों को अनुप्राणित करते हुए उन्हें समुदाय विकास के कुछ लक्ष्यों – आवास व्यवस्था, विद्यालय, चिकित्सालय, उपभोक्ता सहकारी भण्डार, शॉपिंग सेन्टर आदि को प्राप्त करने में आंतरिक एवं बाह्य साधनों के उपयोग में सहायता दे सकता है। इस कारण श्रम कल्याण के अन्तर्गत उन समस्त प्रावधानों का समावेश होना चाहिए, जो श्रमिकों के शारीरिक एवं मानसिक विकास हेतु आवश्यक हैं। अस्तु– वे श्रमिक कल्याण के अन्तर्गत आवास व्यवस्था, स्वास्थ्य एवं शैक्षणिक सुविधाएं, आराम तथा मनोरंजन की सुविधाएं, शिशु गृह, अवकाश–गृह, सामाजिक बीमा संबंधी सुविधाएं, बीमारी तथा मातृत्व हितलाभ, भविष्य निधी, उपदान, पेंशन तथा अपंग श्रमिकों के पुनर्स्थापन की व्यवस्था आदि उपदानों को सम्मिलित करना चाहते थे। इस प्रकार श्रम कल्याण का प्रत्यय परिवर्तनशील हैं। अतः श्रम कल्याण को व्यापक दृष्टि से देखने की आवश्यकता हैं, इसके अन्तर्गत औद्योगिक संबंध एवं कार्मिक प्रबन्ध से संबंधित क्रिया कलापों को सम्मिलित करने की आवश्यकता हैं।

भारत सरकार द्वारा नियुक्त अध्ययन दल ने श्रम कल्याण संबंधी क्रिया कलापों को तीन समूहों में विभाजित किया हैं

1. औद्योगिक प्रतिष्ठान के भीतर प्रदत्त कल्याणात्मक सुविधा।
2. औद्योगिक प्रतिष्ठान के बाहर प्रदत्त कल्याण सुविधाएं।
3. सामाजिक सुरक्षा संबंध सुविधाएं।

इसके अतिरिक्त क्लब की सदस्यता, कम्पनी की टेलीफोन सेवा का उपयोग तथा और भी कुछ ऐसी सुविधाएं हैं जिन्हे कम्पनी अपने श्रमिकों को प्रदान करती हैं।

अन्त में यह बात उल्लेखनीय हैं कि श्रम कल्याण सेवाओं की उपयोगिता केवल मानवीय दृष्टि से ही उल्लेखनीय नहीं हैं वरन उत्पादकता वृद्धि की दृष्टि से भी इसका महत्व हैं। इस दृष्टि से नियोक्ता कल्याण अधिकारी, कारखाना निरीक्षक एवं श्रमिक संघ सभी की यह जिम्मेदारी हैं कि श्रम कल्याण सुविधाओं को श्रमिकों हेतु अधिकाधिक कल्याणकारी एवं उपयोगी बनाएं।

***शोधार्थी**
समाजशास्त्र विभाग
म.द.स. विश्वविद्यालय अजमेर, (राजस्थान)

सन्दर्भ सूची

1. रिपोर्ट ऑफ दी रायल कमीशन लेबर इन इण्डियन
2. मूर्ति, एम.वी. प्रिंसिपल्स ऑफ लेबर वेलफेयर, विशाखा पटनम, गुप्ता ब्रदर्स
3. रिपोर्ट ऑफ दी कमेटी ऑन लेबर वेलफेयर (1969)
4. ब्लीटन एण्ड टनेबुल, दी डायनेमिक्स ऑफ इम्प्लायी रिलेशन्स, मेंकमिलन, लंदन।
5. शर्मा एण्ड दयालः मैनेजमेंट ऑफ हेड युनियन्स एस.आर.जी. पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली